International Refereed, Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary & Open Access Research Journal

**Issue: 1 | Vol.: 10 | Jan.-Feb.-Mar.-2023 | Pages: 58–60 | RRSSH | ISSN: 2348 – 3318 |**

# साहित्य और संस्कृति का अन्तर्सम्बन्ध

**प्रवेश के० त्रिपाठी**
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, मेरठ कालेज, मेरठ
सम्बद्ध– चौधरी चरण सिंह विश्व विद्यालय, मेरठ (उ०प्र०)
ईमेल– tripathipravesh439@gmail.com

| *Received* : 10/01/2023 | *1st BPR* : 18/01/2023 | *2nd BPR* : 29/01/2023 | *Accepted* : 10/02/2023 |
|---|---|---|---|

**Abstract**

साहित्य की विवेचना केवल अभिव्यंजनात्मक पक्ष, शब्दार्थ के सहभाव तथा अभ्यंतर रस पक्ष को लेकर ही नही की जा सकती बल्कि उनकी सामाजिक प्रेरणा और सामाजिक उपयोगिता के साथ–साथ सांस्कृतिक मूल्यों, मान्यताओ, संस्कारों रीति–रिवाजों आदि पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है। साहित्य की बदौलत ही मानव जीवन और मनुश्य के मन का संस्कार होता है। साहित्य शब्द मे 'हित'– का भाव निहित है अर्थात् वास्तव में सच्चा साहित्य वहीं है, जो समाज एवं सामाजिक संस्कारों तथा समाज में रहने वाले लोगों की मान्यताओं एवं परम्पराओं के लिए हितकारी होता है। संस्कृति से तात्पर्य संस्कार, सुधार, परिष्कार' शुद्धि सजावट एवं सभ्यता से लिया जाता है। वास्तव में किसी देश के निवासियों के जीवन स्तर एवं रहन–सहन की स्थिति का विश्लेषण ही संस्कृति का दायरा माना जाता है। हिन्दी साहित्य में मूलतः एक भारतीय संस्कृति, परम्परा, धर्म अपनी अस्मिता को लेकर शुरू हुआ। सन् 1960 के बाद अर्थोपार्जन हेतु विदेश गये भारतीयों द्वारा गिरमिटिया देशों के साहित्य में इतिहास के शोषण, जीवन संघर्ष की मूक अभिव्यक्ति एवं संकट से जुड़ी संवेदनायें हैं। इन सभी भारतीयों के साहित्य में सांस्कृतिक संवदेनाओं को बखूबी अपने साहित्य में समय–समय पर उकेरा गया है।

***Key words*** **:** संस्कृति, सम्बन्ध व अन्तर्सम्बन्ध।

डा० राम रहन भटनागर के शब्दों में– ''भारतीय विवेचन में साहित्य की रसमूलकता का आग्रह है, परन्तु साहित्य और साहित्यकार के व्यक्तित्व से उसका अन्तरावलम्बन स्थापित नहीं किया गया। पश्चिमी साहित्य में इन पक्षों पर विचार की एक लम्बी परम्परा है। जो पाश्चात्य विचारक प्लेटो से पाश्चात्य विचारक कैडविल तक जारी है। साहित्य को समाजधर्मी बनाकर पश्चिम ने रसबोध की व्यक्तिगत एवं मनोनिष्ठ प्रक्रिया की समष्टिमूलकता दी है।''[1]

स्वान्तः सुखाय कहकर''तुलसी ने मानस में साहित्य के व्यक्तित्व– परिष्कार और रसबोध के तत्वों की प्रधानता दी है तथा '**सुरसरिसम सब कर हित होंगे**' साहित्य की सामाजिकता एवं सामाजिक परम्पराओं, मान्यताओं की आधार के रूप में भी स्वीकृति प्रदान की है।''[2] अतः साहित्य की विवेचना केवल अभिव्यंजनात्मक पक्ष, शब्दार्थ के सहभाव तथा अभ्यंतर रस पक्ष को लेकर ही नही की जा सकती बल्कि उनकी सामाजिक प्रेरणा और सामाजिक उपयोगिता के साथ–साथ सांस्कृतिक मूल्यों, मान्यताओ, संस्कारों रीति–रिवाजों आदि पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है।

साहित्य की इसी विशेषता को आधार बनाकर उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ने कहा है कि– ''साहित्य हमारे जीवन को स्वाभाविक और सुन्दर बनाता है''। दूसरे शब्दों में– साहित्य की बदौलत ही मानव जीवन और मनुश्य के मन का संस्कार होता है।''[3]

साहित्य शब्द मे 'हित'– का भाव निहित है अर्थात् वास्तव में सच्चा साहित्य वहीं है, जो समाज एवं सामाजिक संस्कारों तथा समाज में रहने वाले लोगों की मान्यताओं एवं परम्पराओं के लिए हितकारी होता है। जिस साहित्य में सामाजिक उन्नति की भावना होने के साथ–साथ, लोकमंगल की कामना तथा लोक संस्कृति एवं संस्कारों के रक्षण की प्रवृत्ति हो, वही समाज के लिए उपयोगी एवं अनुकरणीय होता है। उपर्युक्त मनोभावों को प्रमाणित करते हुए उचित ही कहा गया है–

**''हितेन इति सहितः हस्य भावः साहित्यम्।''**

अथवा

**''हितम् सन्निहितम् हितस्य तत् साहित्यम्।''[4]**

ये सभी इसी भावसत्य को प्रकाशित करते है कि ''साहित्य का मूल तत्व'' हितस्य साधनम्'' है।

संस्कृति से तात्पर्य संस्कार, सुधार, परिष्कार' शुद्धि सजावट एवं सभ्यता से लिया जाता है। वास्तव में किसी देश के निवासियों के जीवन स्तर एवं रहन–सहन की स्थिति का विश्लेषण ही संस्कृति का दायरा माना जाता है। मानव के संस्कृति

International Refereed, Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary & Open Access Research Journal

**Issue: 1 | Vol.: 10 | Jan.-Feb.-Mar.-2023 | Pages: 58–60 | RRSSH | ISSN: 2348 – 3318 |**

एवं संस्कृतिवादी चिन्तन के अन्तर्गत जीवन के सभी महत्वपूर्ण पहले आ जाते है। यथा– ''हमारी संस्कृति ने ह्रास के क्षणों में पुरूष को स्त्री से कितनी दूर रहने का आदेश दिया यह इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्मचारी को चित्र में स्त्री दर्शन भी वर्ज्य एवं एकान्त में माता की सन्निकटता भी अनुचित मानी गयी है। भारत एक वैराग्यमय एवं संयम प्रदान देश है।''[5]

जहां सभ्यता, मानव मूल्य, मानवीय आदर्श, संस्कार, धर्म एवं परम्पराओं के पालन में ही भारतीय जन मानस को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। 'संस्कृति' शब्द आने पर साधारण रूप से हम लोगों के रहन–सहन, खान–पान, तीज–त्यौहार, ग्रामीण एवं शहरी जीवन एवं झाँकियों के प्रतिबिम्बों का चित्रण प्रस्तुत करते हैं। भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों में आध्यमिकता का प्रमुख स्थान है। संस्कृतिवादी चिन्तन का प्रमुख आधार एवं प्रभावी तत्व के रूप में अध्यात्मिकता ही विद्यमान है।

सामान्यतः संस्कृति शब्द अत्यंत व्यापक एवं सारगर्मित है जहां व्याकरण की दृष्टि से संस्कृति का शाब्दिक अर्थ 'अच्छी स्थिति, सुधरी हुई स्थिति आदि का बोधक है वहीं भारतीय चिंतन में संस्कृति के पर्याय के रूप में 'आचार–विचार' शब्द प्रचलित रहा है।

वर्तमान समय एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य में संस्कृति शब्द का अर्थ अंग्रजी के Culture (कल्चर) के अर्थ में लिया जाता है जिसका अर्थ परिष्कार करने अथवा ठीक करने से लिया जाता है।

वस्तुतः संस्कृति मानव इतिहास के बीते युगों की और वर्तमान की रचना समग्रता है। वही हमारी रचना एवं हम उसकी रचना है। यहां रचना समग्रता का आशय आध्यत्मिक एवं भौतिक गतिविधियों, परिवार के गठन, कार्यकलाप के साधनों, कार्यकुशलता, जीवन–मूल्यों की आवधारणाओं, ज्ञान और उसके लक्ष्य क्रियाओं से है। इस तरह हम यह कहते है कि संस्कृति आचार मूलक है और उसका सम्बन्ध विचारों से है। शुद्धाचरण शुद्ध विचारों का जनक है अतः शास्त्र, काव्य, नाटक, कला, कथा, संगीत इत्यादि साहित्य के अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण अंग है। इस तरह जीवन के बारे में उदात्त मूल्य चिंतन, मानवीयता, व्यवहार, आचार–विचार, जीवन–शैली, साहित्य एवं कलाओं आदि को मनुष्य की परिष्कृति के प्रमाण मानकर उनको संस्कृति का विषयमान लिया जाता है।

वायुपुराण के अनुसार– वायुपुराण में धर्म, अर्थ काम, मोक्ष संबंधी मानव जीवन की घटनाओं को संस्कृति के अंतर्गत स्वीकार किया गया था।''[6] इसका आशय यह हुआ कि मानव जीवन के दैनिक आचार–विचार, रहन–सहन, क्रिया–कलापों की कार्यशैली ही संस्कृति कहलायी।''[6]

प्रसिद्ध साहित्यकार/कवि रामधारी सिंह दिनकर ने संस्कृति को अपने शब्दों में अभिव्यक्त करते हुए बताया है कि– ''संस्कृति मानव जीवन में ठीक उसी तरह व्याप्त है जिस प्रकार फूलों में सुगन्ध और दूध में मक्खन के पास है, वे चीजें जो वे करते है।''[7]

उक्त परिभाषाओं एवं विचारों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि संस्कृति किसी भी समाज, परम्परा से मिली भौतिक एवं अभौतिक विरासत का नाम है। संस्कृति विचार और आचरण के वे नियम और मूल्य है जिन्हें कोई साहित्य एवं समाज अपने सृजन, विकास एवं प्रगति के यात्रा के दौरान प्राप्त करता है। भारतीय परम्परा में भावना को जो स्थान प्राप्त है यूनानी परम्परा में वही विचार का है। दोनों परम्पराओं में बुद्धि को अपना स्थान प्राप्त है। भारतीय संस्कृति की भव्यता, अखंडता और दीर्घ जीवन का कारण, जीवन में भावना, साहित्य और दर्शन को यथोचित स्थान प्रदान करता है। भावना के संस्कार से ही मनुष्य हैवान से इन्सान बन जाता है। और समाज के उत्थान में अपना योगदान देता है। साहित्य मानव जीवन के सुख–दुख, हर्ष–विषाद, आकर्षण–विकर्षण के ताने–बाने से निर्मित होता है। उसमें मानव की आत्मा का स्पन्दन प्रतिफल होता है। साहित्य वस्तुतः मानव की संस्कृति, समस्याओं अनुभूतियों का साकार रूप है। अंग्रजी के एक विद्वान ने ठीक ही कहा है कि–*''Literature is brain of Humanity''* अर्थात्–साहित्य मानव समाज का कर्म मस्तिक है।[8]

अतीत के रीति–रिवाज, रहन–सहन सभ्यता–संस्कृति आदि का सार हमें साहित्य से ही प्राप्त होता है।

गौरवशाली भारतीय अतीत एवं अतुलनीय भारतीय संस्कृति का उद्घाटन व अवकोलन हमें साहित्य ने ही कराया है।

सांस्कृतिक परिस्थितियों, मूल्यों और आवश्यकताओं के ही अनुसार साहित्य का स्वरूप निर्धारित होता है। इस प्रकार साहित्य वास्तव में संस्कृति का दर्पण है। साहित्य सदैव समाज को संजीवनी शक्ति प्रदान करके उसकी प्रगति का मार्ग प्रशस्त करता है। साहित्य अतीत की संस्कृति से प्रेरणा प्राप्त कर उसके वर्तमान में परिमार्जित जीवन मूल्यों को चित्रित करता है और उसी वर्तमान के आधार पर साहित्य के द्वारा ही भविष्य की संस्कृति के लिए मार्ग प्रशस्त किया जाता है।

संस्कृति में सामाजिक गुण निहित होते हैं जबकि साहित्य का कर्ता समाज होता है। संस्कृति प्रत्येक समाज में एक विशेष प्रकार की होती है। इसका प्रमुख कारण भौगोलिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ होती है। मनुष्य की आवश्यकताएँ इसी के फलस्वरूप जन्म लेती है, भिन्न–भिन्न हो सकती है और साहित्य पर अपनी अमिट छाप छोड़ती है। साहित्य और संस्कृति को केवल सीखा ही नहीं जाता अपितु इसे एक मानव से दूसरे मानव तक फैलाया पर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांरित भी किया जा सकता है। मानव यह कार्य अपनी भाषा व साहित्य के माध्यम से ही कर सकता है। ऐसा माना

International Refereed, Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary & Open Access Research Journal

**Issue: 1 | Vol.: 10 | Jan.-Feb.-Mar.-2023 | Pages: 58–60 | RRSSH | ISSN: 2348 – 3318 |**

जा सकता है कि संस्कृति मानव के सौंदर्य सुषमा में वृद्धि करती है। उपर्युक्त इसी उक्ति को चरितार्थ करती हुई छायावादी कवि सुमित्रानंदनपंत की निम्न पंक्तियां है–

**''सुन्दर है विहग, सुंदर मानव। तुम सबसे सुंदरतम।**
**निर्मित सबकी तिल सुषमा से, तू निखिल सृष्टि में चिर निरूपम।**

साहित्य की रचना कलम से होती है मै मिली शरणगुप्त जी के शब्दो में–

**''कलम देश की बड़ी शक्ति है।**
**भाव जगाने वाली**
**दिल नही दिमागों में भी**
**आग लगाने वाली।''**

## निष्कर्ष

निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य में मूलतः एक भारतीय संस्कृति, परम्परा, धर्म अपनी अस्मिता को लेकर शुरू हुआ। सन् 1960 के बाद अर्थोपार्जन हेतु विदेश गये भारतीयों द्वारा गिरमिटिया देशों के साहित्य में इतिहास के शोषण, जीवन संघर्ष की मूक अभिव्यक्ति एवं संकट से जुड़ी संवेदनायें हैं। इन सभी भारतीयों के साहित्य में सांस्कृतिक संवदेनाओं को बखूबी अपने साहित्य में समय–समय पर उकेरा गया है। जिससे यह प्रतीत होता है भारतीयों के प्रति कितनी श्रद्धा है और वे इससे कदापि अछूते नही रह सकते।

## संदर्भ संकितः–

1. 'हिन्दी साहित्य' एक अध्ययन (1948): डॉ० रामरतन भटनागर, पृष्ठ 67
2. रामचरितमानस (बालकाण्ड), चौपाईस (13.5)–तुलसीदास
3. मानसरोवर भाग–1: प्रेमचन्द्र, पृ०–107
4. हिन्दी संतकाव्य समाज शास्त्रीय अध्ययन, पृ०–171
5. भारतीय साहित्य में सांस्कृतिक रेखाएं, पृ०–170
6. श्रंखला की कड़ियांः महादेवी वर्माः पृ०–130
7. देवता का जन्म एवं कहानियाँः लेख बलवंत सिंह, पृ०–30
8. साहित्य विधाओं की प्रकृति, पृ०–23
9. Artilery of the Napolnic – Warsh Field, पृ०–31
10. संस्कृति के चार अध्यायः रामधारी सिंह दिनकर, पृ०–96
11. ''कलम या कि तलवार'' रामधारी सिंह दिनकर, पृ०–2
12. ''कविता के बहाने'' सुमित्रा नन्दन पंत, पृ०–4
13. वैश्विक परिदृश्य में साहित्य एवं भारतीय संस्कृतिः डा० पी०आर०वासुदवेन 'शेष', लेख